Toppersnotes®
Unleash the topper in you

UP – TGT

प्रशिक्षित स्नातक शिक्षक

उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा सेवा चयन बोर्ड

संस्कृत

भाग – 1

SIERRA INNOVATIONS

UP TGT – SANSKRIT

क्र.सं.	अध्याय	पृष्ठ सं.
	विषयवस्तुः	
1.	संस्कृत उत्पत्ति/उद्भव और विकास	1
2.	वर्ण विचार	41
3.	माहेश्वर सुत्र/प्रत्याहार (अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त, ऋकारान्त)	48
4.	संधि	62
5.	समास	75
6.	कारक	89
7.	शब्दरूप	98
8.	लकार भू, गम्, पठ्, पा/पिब्, लभ्, हन्, दुह, दा, भी, दिव्, जनि, तुद्, रुध्, प्रच्छ, चूर (आत्मस्नैपदी) (परमस्नैपदी)	115
9.	संख्या ज्ञान (1 से 100)	137
10.	वाक्य परिवर्तन	141

संस्कृत भाषा का उद्भव और विकास

भाषा की उत्पत्ति

- भाषा की उत्पत्ति यह विषय अत्यन्त उलझा हुआ है। इस विषय पर विद्वानों ने जो विचार प्रस्तुत किये हैं, वे अपूर्ण और अनिर्णयात्मक है।
- भाषा उत्पत्ति के लिए दो बातें अनिवार्य है
  1. वाग्यन्त्र से ध्वनन या वर्णोच्चारण की क्षमता प्राप्त करना।
  2. उच्चरित ध्वनि का, अर्थ के साथ सम्बन्ध स्थापित करने का प्रारम्भ।
- प्रथम बात प्रायः सभी पशु-पक्षियों एवं अन्य जीवों में प्राप्त होती है।
- पशु- पक्षियों में स्पष्ट उच्चारण या व्यक्त वाक् का अभाव है, अतः वे स्पष्ट रूप से बोलने में असमर्थ हैं।
- मनुष्य को बोलने की क्षमता जन्म से प्राप्त है, अतः वह जन्म से वाग्यन्त्र या वागिन्द्रिय का प्रयोग करता है।
- दूसरी बात में शब्द और अर्थ के सम्बन्ध जानने की जिज्ञासा ही मुख्य विषय है।
- भाषा-उत्पत्ति विषयक समस्त सिद्धान्त अनुमान पर आश्रित है एवं विज्ञान अनुमान पर आश्रित न होकर तथ्यों पर निर्भर होता है।
- यह दर्शन, मानव-विज्ञान या समाज-विज्ञान का विषय होने के कारण भाषा-विज्ञान इस दिशा में अपनी असमर्थता प्रकट करता है।
- सामान्य लोकप्रियता का विषय होने से इसके प्रस्तावित सिद्धान्तों का वर्णन किया जा रहा है

1. दिव्योत्पत्ति-सिद्धान्त

- यह सबसे प्राचीन मत है। इसके अनुसार- जिस प्रकार परमात्मा ने मानव- सृष्टि की, उसी प्रकार मानव के लिए एक परिष्कृत भाषा भी दी।
- दैवीय शक्ति ही इस सिद्धान्त का मूल है। उसी दैवी शक्ति ने ही सृष्टि के प्रारम्भ में ही वेदों का ज्ञान दिया, जिससे मानव अपना क्रिया-कलाप चला सका।
- वेदों, उपनिषदों तथा अनेक दर्शन ग्रन्थों में यह बात प्रमाणित है कि ईश्वर से ही वेदों की उत्पत्ति हुई ।

समीक्षा- इस सिद्धान्त पर निम्न आपत्तियाँ की गयी है।

1. यह सिद्धान्त तर्क या विज्ञान संगत नहीं है, केवल आस्था पर निर्भर है।
2. यदि भाषा ईश्वर-प्रदत्त होती तो सृष्टि में भाषा भेद नहीं होता।
3. जर्मन् विद्वान् हेर्डर ने लिखा है कि यदि भाषा ईश्वरकृत होती तो यह अधिक सुव्यवस्थित और तर्कसंगत हागी, अधिकांश भाषाएं अव्यवस्थित और त्रुटिपूर्ण है।

2. संकेत-सिद्धान्त

- इसे निर्णयवाद, निर्णयसिद्धान्त तथा स्वीकारवाद आदि अनेक नामों से जाना जाता है।
- इस सिद्धान्त के प्रवर्तक 18वीं शताब्दी के फ्रेंच विद्वान् रूसो है।
- इनके अनुसार व्यक्ति प्रारम्भ में संकेतों के माध्यम से अपना अभिप्राय व्यक्त करता था तथा बाद में सामूहिक रूप से वस्तुओं की संज्ञा दी गयी। य इसे सामाजिक-समझौता कहा जा सकता है।

समीक्षा- इस सिद्धान्त की कुछ न्यूनताएं हैं-

1. बिना भाषा के सभा का आयोजन और विचार-विनिमय कैसे हुआ?
2. संकेत शब्दों के निर्माण के लिए क्या आधार था? किसी व्यक्ति का सुझाव मान लिया गया या फिर सबके अलग अलग मत थे?
3. यदि भाषा के बिना सभा का आयोजन, संकेत निर्माण एवं संकेतों की सामाजिक सम्पुष्टि हो सकती है, तो भाषा की क्या आवश्यकता रह जाती है।

अतः यह सिद्धान्त मान्य नहीं है।

3. रणन - सिद्धान्त

- इस सिद्धान्त को धातु-सिद्धान्त, अनुकरण-सिद्धान्त, अनुरणनमूलकतावाद, अनुरणात्मक-अनुकरण, डिंग - डांगवाद आदि नामों से निर्दिष्ट किया गया है।
- इस सिद्धान्त के मूल प्रवर्तक प्लेटो थे तथा इसको हेस और मैक्समूलर ने व्यवस्थित किया।
- इस मत के अनुसार प्रकृति में एक सामान्य नियम है किसी वस्तु पर चोट मारने पर एक विशेष ध्वनि होती है। यह ध्वनि ही उसकी विशेषता है। इसी ध्वनि को रणन कहा जाता है ।

समीक्षा –

1. इस सिद्धान्त में इतने दोष थे कि बाद में मैक्समूलर ने इसे छोड दिया।
2. इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि किस वस्तु से मस्तिष्क में कौन–सी ध्वनि झंकृत हुई।
3. यह सिद्धान्त शब्द और अर्थ में रहस्यात्मक स्वाभाविक सम्बन्ध मानता है। शब्द और अर्थ का सांङ्केतिक सम्बन्ध है न कि स्वाभाविक यह मत अस्वीकृत होने पर भी रोचकता के लिए प्रचलित है।

4. ध्वन्यनुकरण–सिद्धान्त

- इस सिद्धान्त के अन्य नाम भी है, जैसे– अनुकरणसिद्धान्त, ध्वान्यात्मवानुकरण–सिद्धान्त, अनुकरणमूलकतावाद, शब्दानुकरणवाद, भों–भों–वाद आदि।
- कुत्ते की ध्वनि को अंग्रेजी में BOW – WOW कहते है, अतः हिन्दी में यह भों–भों–वाद हुआ।
- इस सिद्धान्त का अभिमत है कि प्राकृतिक वस्तुओं, पशु पक्षियों आदि की ध्वनि के अनुकरण पर विभिन्न वस्तुओं के नाम रखे जाते है। जो वस्तु जैसी ध्वनि करती है, उसका वैसा ही नाम पडता है। जैसे–काँव–काँव से काक या कौआ, कूकू से कोयल, झर–झर से झरना आदि।

समीक्षा

1. विश्व की भाषाओं में ध्वन्यनुकरण वाले शब्दों की संख्या एक प्रतिशत भी नहीं है। अतः यह भाषोत्पत्ति सम्बन्धी उचित समाधान नहीं है।
2. प्रो0 रेनन की आपत्ति है, यदि मनुष्य पक्षियों जैसे तुच्छ जीवों के शब्दों का अनुकरण करके भाषा बना सकता है, तो वह पशु–पक्षियों से निकृष्ट सिद्ध होता है।
3. कुछ भाषाओं में ध्वन्यनुकरण–शब्द है ही नहीं। जैसे– उत्तरी अमेरिका की 'अथवस्कन' भाषा। आंशिक रूप से स्वीकार्य होते हुए भी यह मत सम्पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं है ।

5. आवेग–सिद्धान्त

- इस सिद्धान्त को मनोभावाभिव्यक्तिवाद, मनोरागव्यञ्जक शब्दमूलकतावाद, पूह–पूह सिद्धान्त, मनोभावाभिव्यञ्जकतावाद आदि के नाम से जाना जाता है।
- इसके अनुसार आरम्भ में मनुष्य भाव प्रधान था और प्रसन्नता, दुःख, विस्मय, घृणा आदि के भाववश उसके मुख से ओ, छि, धिक, आह आदि शब्द सहज ही निकले। धीरे–धीरे इन्हीं से भाषा का विकास हुआ।

समीक्षा – इसको मानने में निम्न कठिनाइयाँ हैं

1. ये शब्द विचारपूर्वक प्रयुक्त नहीं होते हैं बल्कि आवेग की तीव्रता में अनायास निकल पडते हैं।
2. भिन्न–भिन्न भाषाओं में ऐसे शब्द एक रूप में नहीं मिलते यदि स्वभावतः निकलते तो सभी मनुष्यों में लगभग एक समान होते।
3. भाषा में आवेग शब्दों की संख्या 40–50 से अधिक नहीं होगी इन शब्दों से पूरी भाषा पर प्रकाश नहीं पडता। अतः इनको पूर्णतः भाषा का अंग नहीं माना जा सकता। यह भी समस्या को समाप्त करने में असमर्थ है।

6. श्रम–ध्वनि–सिद्धान्त

- इसे यो–हे–हो–वाद, श्रम–परिहरणमूलकतावाद भी कहा जाता है। इनके प्रतिपादक न्वायर (न्वारे) नामक भाषाशास्त्री – इनके अनुसार परिश्रम का कार्य करते समय साँस तेजी से बाहर–भीतर आने–जाने, साथ–साथ स्वरतन्त्रियों को विभिन्न रूपों में कम्पित होने एवं तदनुकूल ध्वनियाँ उच्चरित होने से कार्य करने वाले को राहत मिलती है।
- उदाहरणार्थ कपडा धोते समय धोबी हियो या छियो कहता है और मजदूर आदि हो–हो, हूँ–हूँ कहते है ।

समीक्षा

1. यह मत भाषा की उत्पत्ति के लिए सर्वथा असन्तोष जनक है।
2. शारीरिक परिश्रम जन्य ये शब्द निरर्थक हैं। भाषा की उत्पत्ति के लिए सार्थक शब्दों की आवश्यकता है।
3. अर्थहीन शब्दों से भाषा की उत्पत्ति नहीं हो सकती। यह मत सबसे निकृष्ट और अग्राह्य है।

7. इंगित–सिद्धान्त

- इस सिद्धान्त के प्रवर्तन का श्रेय पालिनेशियन भाषा विद्वान् डॉ. राये को है। डार्विन भी इसके समर्थक हैं।
- प्रो. रिचर्ड इसे मौखिक इंगित सिद्धान्त कहते हैं।
- इस मत के अनुसार प्रारम्भ में मानव ने अपनी आङ्गिक चेष्टाओं का ही वाणी के द्वारा अनुकरण किया और भाषा बनी। जैसे– पानी पीने के समय मुँह से पाप जैसी ध्वनि हुई, अतः पा का अर्थ पीना हुआ।

समीक्षा

1. अपने अनुकरण पर शब्द-रचना हास्यास्पद है। दूसरे के अनुकरण पर शब्द रचना मान्य हो सकती है।
2. हाथ, पैर, ओष्ठ आदि के आधार पर शब्द - रचना की कल्पना निर्मूल है।
3. इंगित- सिद्धान्त पर बने शब्दों की संख्या भाषा में बहुत कम है। यह सिद्धान्त भी सारहीन है।

8. सम्पर्क- सिद्धान्त

- इस मत के प्रतिपादक जी. रेवेज़ हैं, जो मनोविज्ञान के विद्वान् थे।
- इनके मतानुसार मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, उसमें पारस्परिक सम्पर्क की प्रवृत्ति जन्मसिद्ध है। प्रारम्भ में भूख आदि की अभिव्यक्ति के लिए मौखिक और सांकेतिक अभिव्यक्ति का सहारा लिया होगा, उनसे जो ध्वनियाँ निकली वे धीरे धीरे भाषा बनी।

समीक्षा

1. प्रो० रेवेज़ का यह सिद्धान्त बालमनोविज्ञान, जीव-मनोविज्ञान और आदिम प्राणि-मनोविज्ञान पर आश्रित है एवं तर्कसंगत भी है।
2. कुछ अन्य भाषाशास्त्री भी इस मत को अमान्य नहीं करते किन्तु भाषोत्पत्ति के प्रश्न को अनिर्णीत मानते हैं ।

9. सांगीत-सिद्धान्त

- इसको प्रेम-सिद्धान्त, सिंग-सांग थ्योरी, WOO – WOO थियरी भी कहा जाता है।
- डार्विन, स्पेन्सर एवं येस्पर्सन ने इसे कुछ रूपों में माना था।
- इनके सिद्धान्त के अनुसार, मानव के सांगीत से भाषा की उत्पत्ति हुई।

समीक्षा

1. गुनगुनाने से भाषा की उत्पत्ति होना केवल अनुमान पर आश्रित है, इसका कोई प्रमाण नहीं है।
2. प्रारम्भिक व्यक्ति गुनगुनाता था, इसका भी कोई पुष्ट आधार नहीं है।

अतः यह सिद्धान्त भी अस्वीकार्य है।

10. प्रतीक–सिद्धान्त

- इस सिद्धान्त में माना जाता है कि संयोग से किसी शब्द का किसी अर्थ से सम्बन्ध हो जाता है, और वह शब्द उस अर्थ का प्रतीक हो जाता है।
- भाषा–विज्ञान में ऐसे शब्दों को नर्सरी–शब्द कहते हैं जैसे माता, पिता, बाबा आदि।

समीक्षा

1. प्रतीक सिद्धान्त मूलतः भाषा के प्रारम्भिक शब्दों की व्याख्या करता है। भाषा में नर्सरी–शब्द आये, ये भी सत्य है।
2. यह स्थूल शब्दों की उत्पत्ति बता सकता है, सूक्ष्म अर्थ के बोधक शब्दों की उत्पत्ति बताने में असमर्थ है ।

11. समन्वय–सिद्धान्त

- इस सिद्धान्त के प्रवर्तक प्रसिद्ध भाषाशास्त्री हेनरी स्वीट हैं।
- उन्होंने नये सिद्धान्त की अपेक्षा सर्वसिद्धान्त – संकलन को अधिक उपयुक्त समझा है।
- उनके अनुसार यदि सभी सिद्धान्तों में से आवश्यक तत्व को एकत्रित कर लिया जाय तो भाषा की उत्पत्ति सम्बन्धी समस्याओं का निराकरण हो सकता है।

समीक्षा

1. भाषा की उत्पत्ति समझाने के लिए अन्य कोई एकमत शुद्ध न होने से सबका समन्वय उपयुक्त माना गया ।
2. यह सिद्धान्त सामान्यतया निर्विरोध रूप से स्वीकार किया जाता है ।

12. प्रतिभा – सिद्धान्त

- प्रतिभा– सिद्धान्त के संस्थापक आचार्य भर्तृहरि हैं।
- वाक्यपदीय में भर्तृहरि ने प्रतिभा को विश्व की आत्मा माना है और उसे सर्वशक्ति– सम्पन्न बताया है।
- इस प्रकार भाषा की उत्पत्ति मनुष्य के प्रतिभाओं से हुई है।
- भर्तृहरि, पूर्व–जन्म के संस्कारों को भी भाषोत्पत्ति का कारण मानते हैं।

समीक्षा

1. मनुष्यों में कोई मौलिक उद्भावना या शक्ति नहीं थी। अतः भाषोत्पत्ति सम्बन्धी 'समन्वय-सिद्धान्तही सर्वथा उत्कृष्ट है।

संस्कृत भाषा का उद्भव और विकास

- संस्कृत भाषा भारत- यूरोपीय अथवा भारत- जर्मनीय परिवार की प्रमुख भाषाओं में है।
- संस्कृत के मूल स्रोत के सम्बन्ध में चाहे जो भी कल्पनाएं की जायें, किन्तु इसके भाषायी इतिहास का प्रारम्भ इसके प्राचीनतम रूप ऋग्वेद से ही मानना होगा।
- अवेस्ता और हित्ती, भाषाओं के दो ऐसे रूप हैं जो कि ऋग्वेद से काफी बाद के होने पर भी वैदिक भाषा के प्राग्वैदिक रूपों की झाँकी प्रस्तुत कर सकते हैं।
- संस्कृत आर्यों की भाषा थी और आर्य का मूल निवास भारत ही है। इस बात को पश्चिमी देश नहीं मानते हैं क्योंकि पूरे विश्व को सभ्य और शिक्षित करने के ठेकेदार सिर्फ मिस्र, यूनान आदि देश ही हो सकते हैं।
- भारोपीय भाषाविज्ञानी संस्कृत के उस मूल रूप की स्थिति एशिया या यूरोप में चाहे जहाँ मानने की बात कहें, किन्तु संस्कृत से भाषा के जिस रूप का बोध होता है उसका जन्म एवं पोषण भारत की इसी भूमि पर हुआ था, इसमें कोई सन्देह नहीं।
- सौभाग्य की बात है कि संस्कृत विश्व की एक ऐसी पुरातन भाषा है, जिसके साहित्य भण्डार में विश्व की प्राचीनतम लिखित सामग्री प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, जिसकी साहित्यिक भागीरथी का प्रवाह कई हजार वर्षों से निरवच्छिन्न रूप में प्रवाहमान रहा है यद्यपि उसके भाषिक विकास की प्रक्रिया अवश्य ही आज से लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व एक बिन्दु पर आकर स्थिर-सी हो गयी थी।
- ऋग्वैदिक काल के उपरान्त हमें इसके विकास के विभिन्न स्तरों के रूप अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट रूप में दृष्टिगोचर होने लगते हैं।
- ऋग्वेद तथा अथर्ववेद के मन्त्रों की भाषा संहिताओं तथा ब्राह्मण ग्रन्थों की भाषा, ब्राह्मणों तथा सूत्रों एवं उपनिषदों की भाषा, उपनिषदों तथा महाकाव्यों की भाषा की पारस्परिक तुलना करने पर स्पष्ट हो जाता है कि संस्कृत में, एक जीवित भाषा में कालक्रम से होने वाले परिवर्तनों के समान, उल्लेख्य परिवर्तन घटित हो रहे थे।
- संस्कृत भाषा के विकास स्तर को तीन-स्तरों पर देखा जा सकता है।

1. वैदिक 2. उत्तरवैदिक 3. लौकिक

- वैदिक के अन्तर्गत संहिताओं तथा ब्राह्मण- ग्रन्थों की भाषा को, उत्तरवैदिक में आरण्यकों, उपनिषदों एवं सूत्र साहित्यों की भाषा को रखा जा सकता है।

- इसके बाद की साहित्यिक एवं शास्त्रीय भाषा को लौकिक के अन्तर्गत रखा जा सकता है।लौकिक साहित्य ग्रन्थ 'रामायण' है। रामायण काल से लेकर वर्तमान समय तक संस्कृत का विकास हो रहा है। इस प्रकार संस्कृत भाषा रूपी गङ्गा को वैदिक काल से लेकर वर्तमानकाल तक पहुँचने में अनेक मार्गों का अनुसरण करना पडा है।

भारोपीय परिवार

भारतीय यूरोपीय (भारोपीय) से मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाओं की सामान्य रूपरेखा–

विश्व भाषाओं के पारिवारिक वर्गीकरण के अनुसार 18 भेद माने गये हैं! इन 18 भाषाओं को चार भूखण्डों में बाँटा गया है।

(क) यूरेशिया (यूरोप–एशिया)
(ख) अफ्रीका
(ग) प्रशान्त महासागरीय भूखण्ड
(घ) अमेरिका भूखण्ड

यूरेशिया भूखण्ड के अन्तर्गत ही भारोपीय परिवार की गणना की जाती है ।

विश्व के भाषा परिवारों में भारोपीय परिवार का सबसे अधिक महत्व इसके मुख्य कारण निम्न है –

- प्रयोगाधिक्य – इस परिवार की भाषाओं के बोलने वालों की संख्या सबसे अधिक है।
- भौगोलिक व्यापकता – प्रायः सारे विश्व में इस परिवार की भाषाएं बोली जाती है।
- सांस्कृतिक उत्कर्ष – इस परिवार के लोग सभ्यता और संस्कृति में विश्व में सबसे अग्रणी है।
- भाषावैज्ञानिक उत्कर्ष – भाषाविज्ञान एवं भाषाशास्त्र के अभ्युदय का सर्वाधिक श्रेय इसी परिवार को है। संस्कृत, अंग्रेजी, जर्मन और फ्रेंच में सर्वाधिक भाषाशास्त्रीय चिन्तन हुआ।
- तुलनात्मक भाषाविज्ञान का जन्मदाता – भारोपीय परिवार की विभिन्न भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन से ही तुलनात्मक भाषाविज्ञान का जन्म हुआ है।
- भारोपीय परिवार के विभिन्न नाम

  भारोपीय परिवार के विभिन्न नाम समय–समय पर सुझाए गए है। जिनमें प्रमुख चार नाम है

  1. इण्डो जर्मनिक या भारत जार्मनिक परिवार
  2. आर्य परिवार
  3. भारोपीय परिवार – यह नाम अत्यन्त प्रचलित हुआ, अतः इसे ही अपनाया गया। यह नाम सर्वप्रथम फ्रेंच विद्वानों ने दिया।
  4. भारत हित्ती परिवार

- भारोपीय परिवार की शाखाएँ –
- भारोपीय शब्द भारत + यूरोपीय का मूल रूप है।
- यह Indo-European अनुवाद है।
- इस परिवार में भारतवर्ष से लेकर यूरोप तक फैली हुई भाषाओं का संग्रह है।
- इस परिवार में दस शाखाएँ है –

1. भारत–ईरानी (आर्य) (Aryan, Indo - Iranian)
2. बाल्टो स्लाविक (Balto - Slavic, Letto - Slavic)
3. आर्मीनी (Armenian)
4. अल्बानी (Albanian, Illyraian)
5. ग्रीक (Greek, Hellenic)
6. केल्टिक (Keltic)
7. जार्मिक (टयूटानिक) (Germanic, Teutonic)
8. इटालिक (Italic)
9. हिटाइट (Hiltite)
10. तोखारी (To khorian)

- केन्टुम् और शतम् (सतम्) वर्ग
- भारोपीय परिवार की भाषाओं को ध्वनि के आधार पर दो भागों में विभक्त किया जाता है
  1. केन्टुम् 2. शतम्
- इस विभाजन का श्रेय प्रो. अस्कोली को है।
- सभी भारोपीय भाषाओं को दो भागों में विभक्त किया गया है प्रथम चरपरिवार शतम् वर्ग आते हैं और परिवार केन्टुम् वर्ग में
- सौ के लिए मूल भारोपीय भाषा का शब्द क्मतोम् (Kmtom) माना जाता है।
  मूल भारोपीय शब्द – Kmtom (क्मतोम् = शतम्)

शतम् (सतम्) वर्ग	केन्टुम् वर्ग
संस्कृत – शतम्	लैटिन – केन्टुम्
अवेस्ता – सतम्	ग्रीक – हेकटोन
फारसी – सद	केल्टिक – केत्
हिन्दी – सौ	तोखारी – कन्ध
रुसी – स्तो (Sto)	गाथिक – हुन्ड

लिथुआनियन – (रिजम्तास) जर्मन – हुन्डर्ट
फ्रेंच – सं
इटालियन – केन्तो

- भारोपीय परिवार–विभाजन

भारोपीय–परिवार को केन्टुम् और शतम् वर्ग के आधार पर निम्न प्रकार से बाँटा गया है

शतम् वर्ग	केन्टुम् वर्ग
1. भारत–ईरानी	5. ग्रीक
2. बाल्टो स्लाविक	6. केल्टिक
3. आर्मीनी	7. जार्मनिक
4. अल्बानी	8. इटालिक
	9. हिटाइट
	10. तोखारी

भारोपीय परिवार की विशेषताएँ –

- रचना की दृष्टि से भारोपीय परिवार श्लिष्ट योगात्मक है।
- इस परिवार की मूल भाषाएँ संस्कृत, ग्रीक, लैटिन आदि संयोगात्मक थीं, परन्तु इनसे विकसित आधुनिक भाषाएँ हिन्दी, अंग्रेजी आदि वियोगात्मक हो गई।
- भारोपीय भाषाओं की धातुएँ प्रायः एकाक्षर थीं।
- इन भाषाओं में (संस्कृत में) प्रत्यय दो प्रकार के थे
  1. कृत् – जो सीधे धातु से जोडे जाते थे। इन्हें Primary Suffixes कहते हैं। जैसे – भू + त = भूत।
  2. तद्धित – ये शब्दो से जुडते हैं। जैसे – भूत + इक = भौतिक
     इन्हें Secondary Suffixes कहते हैं ।

- शब्द या धातु से पद बनाने के लिए दो प्रकार से प्रत्यय लगते थे –
  (क) सुप् – (Case&imdicating Suffixes)(शब्दों से)
  (ख) तिङ्– (Verbal Suffixes) (धातुओं से)

- पदों का ही वाक्य में प्रयोग होता था।
- पदों को समस्त कर बृहत् पद बनाने की प्रवृत्ति मूल भारोपीय भाषा में थी। वह भारोपीय परिवार में भी रही।

- मूल भारोपीय भाषा में उदात्त स्वर के कारण स्वर भेद (गुण, वृद्धि, दीर्घ) होता था।
- भारोपीय भाषाओं में मूल प्रत्ययों का लोप हो गया और स्वर परिवर्तन से ही अर्थ-परिवर्तन का काम लिया जाने लगा। अंग्रेजी धातुओं में - Drink - Drank - Drunk, संस्कृत में देव > दैव, विधि > वैध, कुमार > कौमार
- भारोपीय भाषा में प्रत्ययों की अधिकता है। मूल भाषा से पृथक् होकर अनेक भाषाएँ विकसित हुईं।
- विश्व भाषा परिवारों में भारोपीय भाषा-परिवार का सबसे अधिक महत्व है। भारोपीय परिवार में भी आर्य परिवार या आर्य शाखा का सर्वाधिक महत्व है ।

शतम् वर्ग

1. भारत ईरानी (आर्य) 2. बाल्टो स्लाविक 3. आर्मीनी 4. अल्बानी

1. आर्य या भारत ईरानी शाखा

- प्राचीनतम साहित्य - विश्व का प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद अपने शुद्ध और प्राचीनतम रूप में संस्कृत में उपलब्ध है।
- समस्त वैदिक साहित्य इसी शाखा में प्राप्त है।
- पारसियों का धर्मग्रन्थ अवेस्ता इसी शाखा में प्राप्त है।
- प्राचीन वर्णमाला एवं ध्वनियाँ - मूल भारोपीय भाषा की प्राचीन ध्वनियों के निर्धारण में संस्कृत और अवेस्ता का असाधारण योगदान है।
- प्राचीन संस्कृति एवं सभ्यता - विश्व की प्राचीनतम संस्कृति और सभ्यता का सर्वांगीण इतिहास संस्कृत और अवेस्ता भाषा के साहित्य से प्राप्त होता है।
- भाषाशास्त्रीय देन - भाषाशास्त्र को ध्वनिविज्ञान, पद विज्ञान (व्याकरण), अर्थविज्ञान का मौलिक आधार संस्कृत से ही प्राप्त होता है।

भारतीय आर्यभाषाएँ

कालविभाजन

भारतीय आर्यभाषाओं को काल की दृष्टि से तीन भागों में बाँटा गया है

1. प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएँ - 2500 ई. पू. से 500 ई. पू. तक
2. मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाएँ - 500 ई.पू. से 1000 ई. तक
3. आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ - 1000 ई. से वर्तमान समय तक

प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएँ

- विकास क्रम के अनुसार प्राचीन भारतीय आर्यभाषाओं को दो भागों में बाँटा गया है
  1. वैदिक संस्कृत 2. लौकिक संस्कृत

वैदिक संस्कृत –

- वैदिक संस्कृत को ही वैदिक, वैदिकी, छन्दस तथा छान्दस आदि नामों से भी जाना जाता है।
- प्राचीनतम रूप ऋग्वेद में मिलता है।
- अन्य वेदों का समय इसके बाद ही माना जाता है।
- समस्त प्राचीनतम संस्कृत वाङ्मय वैदिक संस्कृत में मिलता है
- वैदिक भाषा की पद रचना श्लिष्ट योगात्मक थी।
- धातुरूपों में लेट् लकार का प्रयोग होता था।
- वेद में संगीतात्मक स्वर की प्रधानता थी।

लौकिक संस्कृत

- संस्कृत का सबसे प्राचीन एवं आदिकाव्य वाल्मीकिरामायण 500 ई.पू. का है।
- महाभारत, पुराण, काव्य, नाटक आदि ग्रन्थ 500 ई.पू. से आज तक अविच्छिन्न एवं अविहत गति से अपना गौरव स्थापित किये हुए हैं।
- यास्क, पतञ्जलि, कात्यायन, भास, कालिदास आदि के लेखों से यह स्वतः सिद्ध होता है कि ईसा पूर्व तक संस्कृत लोक व्यवहार की भाषा थी।
- संस्कृत में ही समस्त प्राचीनज्ञान, विज्ञान, कला, पुराण, काव्य, नाटक आदि हैं।
- संस्कृत ने न केवल भारतीय भाषाओं को अनुप्राणित किया अपितु विश्व भाषाओं मुख्यतया भारोपीय भाषाओं को भी प्रभावित किया।

मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाएँ

- मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाओं को तीन भागों में बाँटा गया है –
  1. प्राचीन प्राकृत या पालि (500 ई. पू. से 100 ई. तक)
  2. मध्यकालीन प्राकृत (100 ई. से 500 ई. तक)
  3. परकालीन प्राकृत या अपभ्रंश (500 ई. से 1000ई. तक)

आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ –

1. पश्चिमी हिन्दी – इसकी पाँच प्रमुख बोलियाँ हैं
   1. खडी बोली 2. ब्रजभाषा 3. बाँगरु 4. कन्नौजी 5. बुन्देली

2. राजस्थानी –
   - इसका विकास शौरसेनी के नागर अपभ्रंश से हुआ है।
   - पिंगल के अनुकरण पर राजस्थानी में डिंगल काव्य की रचना हुई। इसकी चार प्रमुख बोलियाँ हैं – मारवाडी, जयपुरी, मालवी, मेवाती।
3. गुजराती –
4. मराठी – 4 बोलियाँ मुख्य हैं– देशी, कोंकणी नागपुरी, बरारी
5. बिहारी – 3 प्रमुख भाषाएँ हैं– भोजपुरी, मैथिली, मगही
6. बंगाली 7. उडिया 8. असमी
9. पूर्वी हिन्दी –इसकी तीन बोलियाँ हैं। अवधी, बघेली, छत्तीसगढी
10. लहँदा (लहँदी) – लहँदा का अर्थ है पश्चिमी। इसकी चार प्रमुख बोलियाँ हैं
    - केन्द्रीय बोली, दक्षिणी (मुलतानी), उत्तरपूर्वी (पोठवारी), उत्तरपश्चिमी (धन्नी)
11. सिन्धी –
    - इसकी पाँच बोलियाँ हैं– विचौली, सिरैकी, लाडी, थरेली, कच्छी
12. पंजाबी
13. पहाडी – इसके तीन भाषा वर्ग हैं
    - पश्चिमी (30 बोलियाँ)
    - मध्य (दो 1. गढवाली 2. कुमायूँनी)
    - पूर्वी (नेपाली) यह नेपाल की राजभाषा है।

मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाएँ

- प्राचीन प्राकृत या पालि (500 ई.पू. से 100 ई. तक)

प्राचीन प्राकृत या पालि (प्रथम प्राकृत)

- तृतीय शताब्दी ई.पू. से प्रथम शती ई. तक के शिलालेख इसके अन्तर्गत आते हैं।
- पालि बौद्धग्रन्थ – महावंश, जातक आदि कथाएँ, प्राचीन जैनसूत्रों की भाषा, प्रारम्भिक नाटकों की भाषा प्राकृत रही है।
- प्राचीन प्राकृत को प्रथम प्राकृत भी कहते हैं।

प्राकृत की उत्पत्ति संस्कृत से – प्रकृति का अर्थ है – मूलभाषा संस्कृत, उससे उत्पन्न भाषा प्राकृत है।

- प्राकृत भाषा के सभी प्राचीन वैयाकरणों ने प्राकृत की उत्पत्ति संस्कृत से मानी है।
- प्रकृतिः संस्कृतं तत्र भवं तत आगतं वा प्राकृतम् (हेमचन्द्र)
- प्रकृतिः संस्कृतं तत्र भवं प्राकृतमुच्यते (प्राकृतसर्वस्व)
- प्रकृतिः संस्कृतं तत्र भवत्वात् प्राकृतं स्मृतम् (प्राकृत चन्द्रिका)
- प्राकृतस्य तु स्वयमेव संस्कृतं योनिः (प्राकृत संजीवनी)
- नाट्यशास्त्रकार भरतमुनि ने यह कहा है कि संस्कृत भाषा के शब्दों का ही विकृत एवं परिवर्तित रूप प्राकृत भाषा है।

पालि की व्युत्पत्ति –

- डा. मैक्स वेलेसन ने पाटलि (पाटलिपुत्र) से पालि की उत्पत्ति मानी है। पाटलि > पाडलि > पालि >
- भिक्षु जगदीश काश्यप ने परियाय (बुद्धोपदेश) शब्द से पालि की उत्पत्ति मानी है। परियाय > पलियाय > पालियाय > पालि
- अमरकोश के टीकाकार भानजी दीक्षित ने 'पालरक्षणेर से पालि शब्द माना है। पाल् + इ = पालि
- आचार्य बुद्धघोष और आचार्य धम्मपाल ने छठी शती ई. ने पालि शब्द का प्रयोग बुद्धवचन या मूल त्रिपिटक के लिये किया है। उससे यह शब्द 'पालिर भाषा के लिए आया है।
- अभिधानप्पदीपिका ने पा धातु से पालि शब्द माना है पा – पालेति रक्खतीति पालि, जो रक्षा करती है या पालन करती है।

पालि की प्रमुख विशेषताएँ

- पालि में वैदिक संस्कृत की 5 स्वर ध्वनियाँ लुप्त हो गई – ऋ, ॠ , ऌ , ऐ, औ।
- पालि में वैदिक संस्कृत के 5 व्यंजन लुप्त हो गए– श, ष, (:) विसर्ग, जिह्वामूलीय, उपध्यमानीय
- पालि मे दो नए स्वर आयें – ह्रस्व ऍ, ह्रस्व ऑ।
- संस्कृत के ऐ > ए, औ > ओ हो गए।
- ड, ढ को ळ, ळह।
- संधियों में केवल तीन संधियाँ है
  1. स्वर सन्धि 2. व्यंजन सन्धि 3. निग्गहीत (अनुस्वार) सन्धि
- पालि में हलन्त शब्द नही है। केवल अजन्त ही है।
- पालि में द्विवचन नहीं होता है।
- शब्द रूपों में चतुर्थी और षष्ठी के रूप समान होते है।

- स्त्री प्रत्यय सात हैं – आ, ई, इनी, नी, आनी, ऊ, ति। झ पालि में 500 से अधिक धातुएँ हैं, 9 गण हैं। अदादिगण और जुहोत्यादि गण नहीं है।
- पालि में लेट् लकार के रूप भी मिलते हैं – हनाति, दहाति
- आत्मनेपद का प्रयोग प्रायः लुप्त हो गया। परस्मैपद शेष रहा
- पालि में तद्भव शब्दों का आधिक्य है। तत्सम और देशज शब्द कम है।

शिलालेखी प्राकृत

- प्राचीन प्राकृत में अशोक के शिलालेखों की प्राकृत भी आती है, अतः इसे शिलालेखी प्राकृत भी कहते हैं।
- शिलालेखी प्राकृत को ही अशोकन प्राकृत, लाट प्राकृत भी कहते हैं।

मध्यकालीन प्राकृत (द्वितीय प्राकृत)

- मध्यकालीन प्राकृत को साहित्यिक प्राकृत भी कहते हैं।
- सर्वप्रथम भरतमुनि ने प्राकृत भाषाओं के विषय में विचार किया है। उनके मतानुसार 7 मुख्य प्राकृत हैं और 7 गौण
- मुख्य प्राकृत – मागधी, अवन्तिजा, प्राच्या, शौरसेनी, अर्धमागधी, बाहलीक, दाक्षिणात्य (महाराष्ट्री)
- गौण प्राकृत – शाबरी, आभीरी, चाण्डाली, शचरी, द्राविडी, उद्रस्ता , वनेचरी
- प्राचीन प्राकृत वैयाकरण वररुचि ने चार प्राकृत मानी हैं शौरसेनी, महाराष्ट्री, मागधी, पैशाची। मागधी के दो रूप हो गये (1) मागधी (2) अर्धमागधी

1– शौरसेनी

- इसका क्षेत्र शूरसेन (मथुरा के आस-पास) प्रदेश था।
- इसका विकास पालि कालीन स्थानीय भाषा से हुआ।
- मध्यदेश की भाषा थी।
- नाटकों में सर्वाधिक प्रयोग हुआ।
- स्त्रियों आदि का वार्तालाप शौरसेनी प्राकृत में ही होता था।
- शौरसेनी से वर्तमान हिन्दी का विकास हुआ
- राजशेखर कृत कर्पूरमंजरी का समस्त गद्य भाग शौरसेनी प्राकृत में है।
- भास, कालिदास आदि के नाटकों में गद्य शौरसेनी में ही है।